कक्षा 12

अर्थशास्त्र
अनुपूरक पाठ्यसामग्री

भाग-ख : समष्टि अर्थशास्त्र - एक परिचय

(मार्च 2015 की परीक्षा के लिए)

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, दिल्ली

प्रीत विहार, दिल्ली - 110092

भाग 2 : प्रारम्भिक समष्टि अर्थशास्त्र

इकाई - 5

राष्ट्रीय आय और संबंधित समुच्चय

कुछ अवधारणाएँ

'**राष्ट्रीय आय लेखांकन**' समष्टि अर्थशास्त्र की एक शाखा है और राष्ट्रीय आय तथा संबंधित समुच्चयों का आंकलन इसका एक भाग है। राष्ट्रीय आय और इससे संबंधित कोई भी समुच्चय एक देश की उत्पादन क्रियाओं का माप है। ये आर्थिक क्रियाएँ कहाँ और किसके द्वारा की जाती हैं? क्या इन आर्थिक क्रियाओं से तात्पर्य देश की सीमा में होने वाली आर्थिक क्रियाओं से है या देश की सीमा में रहने वालों द्वारा की गई आर्थिक क्रियाओं से है? ये कुछ मूल प्रश्न हैं। वास्तव में आर्थिक क्रियाओं से तात्पर्य इन दोनों से है। यहाँ एक और प्रश्न उठता है! देश की सीमा से हमारा तात्पर्य क्या राजनीतिक सीमा है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए हमें दो संकल्पनाओं का अर्थ जानना होगा: (i) आर्थिक क्षेत्र और (ii) निवासी। राष्ट्रीय आय लेखांकन के संदर्भ में इनके विशेष अर्थ हैं।

(1) आर्थिक क्षेत्र:

परिभाषा

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार : **आर्थिक क्षेत्र एक देश की सरकार द्वारा प्रशासित वह भौगोलिक क्षेत्र है जिसमें व्यक्तियों, वस्तुओं और पूँजी का निर्बाध संचालन होता है।** इस परिभाषा का आधार व्यक्तियों, वस्तुओं और पूँजी के संचालन की स्वतंत्रता है। एक देश की राजनीतिक सीमा के वह क्षेत्र जहाँ सरकार को यह स्वतंत्रता नहीं है उस देश के आर्थिक क्षेत्र में नहीं आएँगें। इसका एक उदाहरण दूतावास हैं। भारत में विदेशी दूतावासों पर सरकार को यह स्वतंत्रता नहीं है। अत: ये दूतावास भारत के आर्थिक **क्षेत्र** का भाग नहीं माने जाते। प्रत्येक देश के दूतावास को उस देश के आर्थिक **क्षेत्र** का भाग माना जाता है। उदाहरण के लिये भारत में अमरीका का दूतावास अमरीका के आर्थिक **क्षेत्र** का हिस्सा है। इसी प्रकार अमरीका में भारतीय दूतावास भारत के आर्थिक **क्षेत्र** का एक हिस्सा है।

विस्तार

एक देश की आर्थिक **क्षेत्र** में निम्नलिखित शामिल किए जाते हैं :-

(i) देश की राजनीतिक सीमा (समुद्री सीमा और आकाशी क्षेत्र सहित)

(ii) देश के विदेशों में दूतावास, वाणिज्य दूतावास तथा सैनिक प्रतिष्ठान

(iii) देश के निवासियों द्वारा दो या दो से अधिक देशों के मध्य चलाए जाने वाले जलयान व वायुयान।

(iv) मछली पकड़ने की नौकाएँ, तेल व प्राकृतिक गैस यान जो अन्तर्राष्ट्रीय जलसीमाओं में या उन क्षेत्रों में चलाए जाते हैं जिन पर देश का अनन्य अधिकार है।

राष्ट्रीय आय समुच्चयों की दो श्रेणियाँ होती हैं : देशीय और राष्ट्रीय यानि देशीय उत्पाद और राष्ट्रीय उत्पाद।

एक **देश के आर्थिक क्षेत्र में स्थित उत्पादन इकाइयों द्वारा किया गया उत्पादन देशीय उत्पाद कहलाता है।**

(2) निवासी

नागरिक और निवासी दो भिन्न शब्द हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि एक व्यक्ति एक ही देश का निवासी व नागरिक दोनों नहीं हो सकता। इसका यह अर्थ भी नहीं है कि एक देश का निवासी उस देश का नागरिक भी होगा या एक देश का नागरिक उसी देश का निवासी भी होगा। एक व्यक्ति एक देश का नागरिक हो सकता है और किसी अन्य देश का निवासी। जो भारतीय विदेशों में रहते हैं वे भारत के नागरिक हैं और जिस देश में रहते हैं, उसके निवासी हैं।

निवासी की परिभाषा

एक व्यक्ति, या एक संस्था, उस देश का निवासी कहलाता है जिस देश में रहता है, या स्थित है, व उसी के आर्थिक क्षेत्र में उसके आर्थिक हित का केन्द्र है।

'आर्थिक हितों का केन्द्र' में दो बातें शामिल होती हैं :- (i) वह निवासी (व्यक्ति या संस्था) उस देश की आर्थिक सीमा में रहता है (या स्थित है) और (ii) उसकी कमाने, खर्च करने और संचय करने की आर्थिक क्रियाएँ वहीं से होती हैं।

एक देश के निवासियों द्वारा किया गया उत्पादन राष्ट्रीय उत्पाद कहलाता है। यह उत्पादन चाहे उस देश की आर्थिक सीमा में किया गया हो या उससे बाहर।

इसकी तुलना में, उन सभी उत्पादन इकाईयों द्वारा किया गया उत्पादन जो एक देश की आर्थिक सीमा में स्थित है, देशीय उत्पाद कहलाता है, चाहे यह उत्पादन निवासियों द्वारा किया गया हो या गैर-निवासियों द्वारा किया गया हो।

(3) मध्यवर्ती उत्पाद तथा अंतिम उत्पाद

वे वस्तुएँ और सेवाएँ जिन्हें कोई उत्पादन इकाई अन्य उत्पादन इकाइयों से दोबारा बेचने के लिए या फिर उसी वर्ष उत्पादन में पूरी तरह प्रयोग में लाने के लिए खरीदती है, उन्हें **मध्यवर्ती उत्पाद** कहते हैं। इन पर होने वाला व्यय **मध्यवर्ती लागत या मध्यवर्ती उपभोग** कहलाता है।

वे वस्तुएँ और सेवाएँ जो उपभोग, यानि आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए, या फिर निवेश करने हेतु खरीदी जाती है, **अंतिम उत्पाद** कहलाती हैं। इन पर होने वाला व्यय **अंतिम व्यय** कहलाता है।

देशीय उत्पाद से राष्ट्रीय उत्पाद की ओर

किसी देश के आर्थिक क्षेत्र में किया गया कुल उत्पादन 'घरेलू उत्पाद' होता है। किसी देश के निवासियों द्वारा किया गया कुल उत्पादन 'राष्ट्रीय उत्पाद' होता है। सामान्यतया पहले घरेलू उत्पाद का आंकलन किया जाता है फिर इसमें कुछ समायोजन करके राष्ट्रीय उत्पाद का आंकलन किया जाता है। आइए, देखें कि ये समायोजन क्या हैं?

राष्ट्रीय उत्पाद = देशीय उत्पाद

+ देश के निवासियों द्वारा आर्थिक क्षेत्र से बाहर किया गया उत्पादन

– देश के आर्थिक क्षेत्र में गैर-निवासियों द्वारा किया गया उत्पादन

देश के निवासियों द्वारा आर्थिक क्षेत्र से बाहर किए गए उत्पादन में योगदान को 'विदेशों से प्राप्त कारक आय'

कहते हैं। देश के आर्थिक क्षेत्र में गैर–निवासियों द्वारा किए गए उत्पादन में योगदान को 'विदेशों को दी गई कारक आय' कहते हैं। अत:

राष्ट्रीय उत्पाद = देशीय उत्पाद
+ विदेशों से प्राप्त कारक आय
– विदेशों को दी गई कारक आय

विदेशों से प्राप्त कारक आय और विदेशों को दी गई कारक आय के अन्तर को 'विदेशों से निवल कारक आय' कहते हैं। अत: राष्ट्रीय उत्पाद = देशीय उत्पाद + विदेशों से निवल कारक आय।

यदि विदेशों से प्राप्त कारक आय, विदेशों को दी गई कारक आय से अधिक होती है तो विदेशों से निवल कारक आय घनात्मक होगी। यदि विदेशों से प्राप्त कारक आय, विदेशों को दी गई कारक आय से कम होती है तो विदेशों से निवल कारक आय ऋणात्मक होगी।

औद्योगिक वर्गीकरण

परिचय

उत्पादन इकाईयों का अलग–अलग औद्योगिक समूहों या क्षेत्रकों में समूहीकरण औद्योगिक वर्गीकरण कहलाता है। राष्ट्रीय आय के आंकलन में सबसे पहले यही कार्य करना होता है। एक ही प्रकार की उत्पादन इकाईयों के समूह के राष्ट्रीय आय में योगदान का आंकलन करना प्रत्येक उत्पादन इकाई के अलग–अलग योगदान के आंकलन करने की तुलना में सरल होता है। एक देश की आर्थिक सीमा की सभी उत्पादन इकाईयों का तीन समूहों में समूहीकरण करना एक सामान्य प्रथा है। ये तीन समूह प्राथमिक क्षेत्रक, द्वितीयक क्षेत्रक और तृतीयक क्षेत्रक हैं।

प्राथमिक क्षेत्रक

इस क्षेत्रक में उन उत्पादन इकाईयों को शामिल किया जाता है जो प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से उत्पादन करती हैं जैसे कृषि, पशुपालन, मछली पकड़ना, खनिज निकालना, वानिकी आदि। इनसे द्वितीयक क्षेत्रक के लिए कच्चा माल मिलता है।

द्वितीयक क्षेत्रक

इस क्षेत्रक में वे उत्पादन इकाईयाँ शामिल की जाती हैं जो एक प्रकार की वस्तु को दूसरे प्रकार की वस्तु में परिवर्तित करती हैं। कारखाने, निर्माण, बिजली उत्पादन, जल आपूर्ति आदि इसके कुछ उदाहरण हैं।

तृतीयक क्षेत्रक

इसे सेवा क्षेत्रक भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत सेवाएँ उत्पादन करने वाली उत्पादन इकाईयाँ आती हैं। परिवहन, व्यापार, शिक्षा, होटल, सरकारी प्रशासन, वित्त आदि इसके कुछ उदाहरण हैं।

राष्ट्रीय आय संबंधी समुच्चय

राष्ट्रीय आय लेखांकन में राष्ट्रीय आय संबंधी बहुत से समुच्चय होते हैं। इनके अध्ययन को सरल बनाने हेतु हम इन्हें तीन समूहों में बाँट लेते हैं :

1. देशीय (घरेलू) व राष्ट्रीय
2. सकल व निवल
3. कारक लागत पर आंकलित और बाजार कीमत पर आंकलित

1. **देशीय (घरेलू) व राष्ट्रीय** : इनके बारे में पहले विस्तार से बताया जा चुका है। ये दोनों समुच्चय सकल व निवल रूप में हो सकते हैं।

2. **सकल व निवल** : उत्पादन करने के लिये मशीनों आदि का प्रयोग किया जाता है। उत्पादन प्रक्रिया में मशीनों आदि की घिसावट होती है जिसे 'स्थिर पूँजी का उपभोग' या 'मूल्यह्रास' कहते हैं। उत्पादन इकाईयों को इस मूल्यह्रास के लिये प्रावधान करना होता है। यदि यह प्रावधान न किया जाए तो राष्ट्रीय आय के विभिन्न समुच्चय सकल रूप में होंगे जैसे सकल घरेलू उत्पादन और सकल राष्ट्रीय उत्पाद। यदि उत्पादन इकाईयाँ मूल्यह्रास का प्रावधान करती हैं तो यह समुच्चय निवल कहलाते हैं जैसे निवल देशीय उत्पाद व निवल राष्ट्रीय उत्पाद। अत:

   निवल देशीय उत्पाद = सकल देशीय उत्पाद – मूल्यह्रास

   निवल राष्ट्रीय उत्पाद = सकल राष्ट्रीय उत्पाद – मूल्यह्रास

3. **बाजार कीमत पर आंकलन और साधन लागत पर आंकलन** : यदि देशीय उत्पाद के मूल्य का आंकलन बाजार कीमत पर किया जाता है तो इसे बाजार कीमत पर देशीय उत्पाद कहते हैं। बाजार कीमत वह कीमत है जिस पर क्रेता वस्तुएँ व सेवाएँ खरीदते हैं। इस कीमत में वस्तुओं पर लगे कर शामिल होते हैं। ये कर सरकार को हस्तांतरित कर दिये जाते हैं। इनका उत्पादन प्रक्रिया से संबंध नहीं है। यदि बाजार मूल्य पर आंकलित देशीय उत्पाद में से ये कर घटा दें तो साधन लागत पर देशीय उत्पाद निकल आएगा। इसी प्रकार सरकार कुछ वस्तुओं पर सरकारी सहायता देती है ताकि उत्पादक इन्हें कम कीमत पर उपभोक्ताओं को बेच सकें। इस प्रकार प्राप्त सहायता उत्पादकों को उत्पादन प्रक्रिया से नहीं मिली। ये उसे उपभोक्ताओं को हस्तांतरित कर देते हैं, वस्तु का बाजार मूल्य कम करके। सरकारी सहायता से वस्तुओं का बाजार मूल्य उनके उत्पादन मूल्य से कम हो जाता है। अत: साधन लागत पर देशीय उत्पाद ज्ञात करने के लिये बाजार मूल्य पर आंकलित देशीय उत्पाद में आर्थिक सहायता जोड़ देते हैं। अत:

   साधन लागत पर देशीय उत्पाद = बाजार मूल्य पर देशीय उत्पाद
   – अप्रत्यक्ष कर
   + आर्थिक सहायता

   अप्रत्यक्ष कर और सरकारी सहायता के अन्तर को निवल अप्रत्यक्ष कर कहते हैं।

निवल अप्रत्यक्ष कर = अप्रत्यक्ष कर – आर्थिक सहायता

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि यदि हमें किसी एक प्रकार का राष्ट्रीय आय समुच्चय ज्ञात है तो अन्य प्रकार के समुच्चय ज्ञात किए जा सकते हैं। साधन लागत पर राष्ट्रीय उत्पाद को राष्ट्रीय आय कहते हैं।

राष्ट्रीय आय =	बाजार मूल्य पर सकल देशीय उत्पाद
–	मूल्यह्रास
–	निवल अप्रत्यक्ष कर
+	विदेशों से निवल कारक आय

राष्ट्रीय आय और उससे संबंधित समुच्चयों के आंकलन की विधियाँ

राष्ट्रीय आय के चक्रीय प्रवाह से हमें इसके आंकलन की तीन विधियाँ मिलती हैं : उत्पादन (मूल्य संवृद्धि) विधि, आय विधि और व्यय विधि। आइए यह जानें कि प्रत्येक विधि से हमें राष्ट्रीय आय कैसे ज्ञात होती है?

(1) उत्पादन (मूल्य संवृद्धि) विधि

इसके अन्तर्गत पहले हम प्रत्येक क्षेत्रक में बाजार कीमत पर सकल मूल्य संवृद्धि ज्ञात करते हैं और सभी क्षेत्रकों की इस मूल्य संवृद्धि का योग करने से हमें बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद ज्ञात हो जाता है। इसमें नीचे दिए गए समायोजन करके राष्ट्रीय आय ज्ञात हो जाती है :

बाजार कीमत पर सकल देशीय (घरेलू) उत्पाद
– स्थिर पूँजी का उपभोग

= बाजार कीमत पर निवल देशीय उत्पाद
– निवल अप्रत्यक्ष कर

= साधन लागत पर निवल देशीय उत्पाद
+ विदेशों से निवल कारक आय

= साधन लागत पर निवल राष्ट्रीय उत्पाद
= राष्ट्रीय आय

(2) आय विधि

इस विधि के अन्तर्गत पहले क्षेत्रक द्वारा किए गए कुल कारक भुगतान का आंकलन करते हैं। फिर तीनों क्षेत्रकों के कारक भुगतानों का योग करने से हमें 'साधन लागत पर निवल मूल्य वृद्धि' (देशीय उत्पाद) या देशीय कारक आय ज्ञात हो जाती है। फिर इसमें नीचे दिखाए गए समायोजन करके राष्ट्रीय आय ज्ञात की जाती है।

साधन लागत पर निवल मूल्य वृद्धि

+ विदेशों से निवल कारक आय

= राष्ट्रीय आय

<u>देशीय कारक आय (कारक भुगतान) के निम्नलिखित घटक होते हैं:</u>

1. कर्मचारियों का पारिश्रमिक
2. किराया और रायल्टी
3. ब्याज
4. लाभ

इन घटकों के बारे में कुछ जानकारी आवश्यक है :

<u>कर्मचारियों का पारिश्रमिक</u> : इसके अन्तर्गत उत्पादकों द्वारा अपने कर्मचारियों को दी गई मजदूरी व वेतन नकद रूप में या किस्म के रूप में जैसे कि मुफ्त आवास आदि और उनके द्वारा कर्मचारियों की सामाजिक सुरक्षा योजना में अंशदान शामिल किए जाते हैं।

<u>किराया</u> : किराए से अभिप्राय भूमि प्रयोग करने के बदले में किरायेदार द्वारा भूमि के मालिक को किया गया भुगतान है। भूमि के अन्दर से खनिज आदि निकालने हेतु पट्टे पर भूमि लिए जाने के बदले में किया गया भुगतान 'रायल्टी' है।

<u>ब्याज</u> : वित्तीय परिसम्पत्ति के मालिकों को उत्पादन इकाइयों द्वारा उस परिसम्पत्ति का प्रयोग करने के लिये देय राशि ब्याज कहलाती है।

<u>लाभ</u> : उत्पादन इकाई के स्वामी को अन्य कारकों का भुगतान करने के बाद जो बचता है वह लाभ कहलाता है।

विभिन्न कारकों को किए गए भुगतान की जानकारी उत्पादन इकाईयों के खातों से मिलती है। कुछ उत्पादन इकाईयाँ ऐसे होती हैं जिनके खातों से कारकों को किया गया कुल भुगतान तो ज्ञात हो जाता है लेकिन इसके प्रत्येक घटक (प्रत्येक कारक को किया गया भुगतान) को किए गए भुगतान के बारे में जानकारी नहीं मिलती। स्व:नियोजित व्यक्ति जैसे कि डाक्टर, वकील, छोटे दुकानदार आदि ऐसी उत्पादन इकाईयों के उदाहरण हैं। इनके द्वारा कारकों के कुल भुगतान को एक अलग श्रेणी में डाला जाता है जिसे 'मिश्रित आय' का नाम दिया जाता है। मिश्रित आय से तात्पर्य है सारे कारकों की इकट्ठी आय। अत:

साधन लागत पर निवल देशीय उत्पाद = कर्मचारियों का पारिश्रमिक

+ किराया व रायल्टी

+ ब्याज

+ लाभ

+ मिश्रित आय (यदि हो)

राष्ट्रीय आय लेखांकन में कारकों को किए गये भुगतान के संबंध में एक और संकल्पना का प्रयोग किया जाता है जिसे **प्रचालन अधिशेष** कहते हैं। यह लाभ, ब्याज, लगान और रायल्टी का योग है। अत:

साधन लागत पर निवल देशीय उत्पाद = कर्मचारियों का पारिश्रमिक

\+ प्रचालन अधिशेष

\+ मिश्रित आय (यदि हो)

(3) व्यय विधि

इस विधि के अन्तर्गत हम उपभोग और निवेश पर किए गए व्यय को जोड़ लेते हैं। यह व्यय देशीय उत्पाद पर किया गया व्यय होता है। इसके विभिन्न घटक हैं :

(i) निजी अन्तिम उपभोग व्यय

(ii) सरकारी अन्तिम उपभोग व्यय

(iii) सकल देशीय पूँजी निर्माण

(iv) निवल निर्यात (निर्यात-आयात)

इन मदों के योग से हमें "बाजार कीमत पर सकल देशीय उत्पाद" ज्ञात होता है। इसमें निम्नलिखित समायोजन से राष्ट्रीय आय ज्ञात हो जाती है।

बाजार कीमत पर सकल देशीय उत्पाद

– स्थिर पूँजी का उपभोग

= बाजार कीमत पर निवल देशीय उत्पाद

– निवल अप्रत्यक्ष कर

= साधन लागत पर निवल देशीय उत्पाद

\+ विदेशों से निवल कारक आय

= साधन लागत निवल राष्ट्रीय उत्पाद

= राष्ट्रीय आय

सकल देशीय पूँजी निर्माण में निम्नलिखित मदें शामिल की जाती हैं :

(i) निवल देशीय स्थिर पूँजी निर्माण

(ii) स्टॉक में परिवर्तन (अन्तिम स्टॉक - प्रारम्भिक स्टॉक)

(iii) स्थिर पूँजी का उपभोग

राष्ट्रीय आय के आंकलन में बरती जाने वाली सावधानियाँ

राष्ट्रीय आय के आंकलन में बहुत सी संकल्पनात्मक व सांख्यिकि समस्याएँ आती हैं। इसके कारण होने वाली गलतियों को न्यूनतम करने के लिये पहले से ही कुछ सावधानियाँ बरतनी आवश्यक हैं।

I. मूल्य संवृद्धि (उत्पादन) विधि का प्रयोग करते समय बरती जाने वाली सावधानियाँ

(i) दोहरी गणना से बचें

मूल्य संवृद्धि ज्ञात करने के लिए उत्पादन के मूल्य में से मध्यवर्त्ती लागत घटा देते हैं। यदि हम सभी उत्पादन इकाईयों के उत्पादन के मूल्य को जोड़ेंगे तो एक उत्पादन द्वारा किया गया उत्पादन एक से अधिक बार जुड़ जाएगा। इससे राष्ट्रीय आय का आंकलन वास्तविकता से अधिक हो जाएगा। इस समस्या से निदान पाने के दो तरीके हैं : (अ) प्रत्येक उत्पादन इकाई द्वारा की गई मूल्य संवृद्धि ही जोड़ें या (ब) केवल अन्तिम उत्पादों के मूल्य की गणना करें।

(ii) पुराने माल की बिक्री को शामिल न करें

किसी भी वस्तु का जब उत्पादन होता है तो उसे उसी वर्ष की राष्ट्रीय आय की गणना में शामिल कर लिया जाता है। प्रयोग करने के बाद उसे बेचना अर्थात् दोबारा बेचना उत्पादन क्रिया नहीं है। लेकिन यदि पुराने माल को किसी के द्वारा बेचा गया है और उसे इस सेवा के लिये कमीशन आदि दिया गया है तो यह कमीशन एक सेवा का मूल्य है और इसे राष्ट्रीय आय में शामिल किया जाएगा।

(iii) स्व:उपभोग उत्पादन को शामिल करना चाहिए

उत्पादन का वह भाग जो बेचा नहीं जाए बल्कि स्व: उपभोग के लिये रख लिया जाए उसे राष्ट्रीय आय का आंकलन करते समय शामिल करना चाहिए। खुद काबिज मकानों का आरोपित (estimated)किराया, किसानों द्वारा स्वयं उपभोग के लिए रखी फसल का हिस्सा आदि इसके कुछ उदाहरण हैं।

II. आय विधि का प्रयोग करते समय बरती जाने वाली मुख्य सावधानियाँ

(i) हस्तांतरण भुगतान या आय को शामिल न करें

राष्ट्रीय आय में कारकों के स्वामियों को उनके द्वारा उत्पादन में प्रदान की गई सेवाओं के बदले में किए गए भुगतान (जिन्हें कारक आय कहते हैं) ही शामिल किए जाते हैं। ऐसा कोई भुगतान जो किसी उत्पादन सेवा के लिए नहीं किया गया हो, हस्तांतरण कहलाता है। उपहार, दान आदि इसके कुछ उदाहरण हैं।

(ii) पूँजीगत लाभ को शामिल न करें

पुरानी वस्तुओं और वित्तीय परिसम्पत्तियों (शेयर आदि) को बेचने से होने वाला लाभ पूँजीगत लाभ कहलाता है। इस प्रकार की आय कारक आय नहीं हैं।

(iii) खुद-काबिज (self - occupied) मकानों का किराया शामिल करें

जब मकान मालिक अपने मकान में रहता है तो वास्तव में वह स्वयं को ही किराया देता है और यह

एक सेवा के लिए भुगतान है। इसलिए इसे कारक भुगतान माना जाएगा।

(iv) उत्पादन इकाईयों के स्वामियों द्वारा प्रदान की गई नि:शुल्क सेवाएँ भी शामिल करें

इसके मुख्य उदाहरण हैं स्वयं की उत्पादन इकाई के लिये वित्त प्रदान करना, भवन प्रदान करना, स्वयं की सेवाएँ प्रदान करना। इन सब सेवाओं के आरोपित मूल्यों को कारक आय में शामिल करना चाहिए।

III. व्यय विधि का प्रयोग करते समय बरती जाने वाली मुख्य सावधानियाँ

(i) मध्यवर्ती वस्तुओं पर व्यय को शामिल न करें

इस विधि के द्वारा राष्ट्रीय आय का आंकलन करने के लिए केवल उपभोग व निवेश पर किए गए व्यय का योग किया जाता है इसे अन्तिम व्यय भी कहते हैं। मध्यवर्ती वस्तुओं पर व्यय को शामिल करने से दोहरी गणना हो जाएगी। कच्चे माल पर व्यय इसका एक उदाहरण है।

(ii) पुरानी वस्तुओं और वित्तीय परिसम्पत्ति के क्रय पर व्यय शामिल न करें

पुरानी वस्तुएँ भूतकाल में किया गया उत्पादन है और वित्तीय सम्पत्तियाँ ना तो वस्तुएँ हैं और न ही सेवाएँ। अत: इन पर किए गए व्यय को शामिल नहीं करना चाहिए।

(iii) स्वयं उत्पादित अन्तिम उत्पादों के स्वयं उपभोग को शामिल करना चाहिए

अपने स्वयं के मकान में रहने पर यह मान लिया जाता है कि मालिक स्वयं को ही किराया दे रहा है।

(iv) हस्तांतरण भुगतान को शामिल न करें

उपहार, दान आदि पर किया गया व्यय किसी वस्तु या सेवा के बदले नहीं है। ये हस्तांतरण व्यय हैं।

प्रयोज्य आय

परिचय

उपभोग व्यय और बचत के लिए उपलब्ध आय को प्रयोज्य आय कहते हैं। इसमें कारक आय और इसमें गैर कारक आय दोनों शामिल होती है। राष्ट्रीय आय में केवल कारक आय शामिल की जाती है। यदि राष्ट्रीय आय ज्ञात हो तो प्रयोज्य आय ज्ञात की जा सकती है।

राष्ट्रीय प्रयोज्य आय

राष्ट्रीय प्रयोज्य आय से संबंधित दो समुच्चय होते हैं (i) सकल राष्ट्रीय प्रयोज्य आय और (ii) निवल राष्ट्रीय प्रयोज्य आय

सकल राष्ट्रीय प्रयोज्य आय = राष्ट्रीय आय
+ निवल अप्रत्यक्ष कर
+ मूल्यह्रास
+ विदेशों से निवल चालू हस्तांतरण

अथवा

सकल राष्ट्रीय प्रयोज्य आय = बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद
+ विदेशों से निवल चालू हस्तांतरण

निवल राष्ट्रीय प्रयोज्य आय = सकल राष्ट्रीय प्रयोज्य आय
− मूल्यह्रास
= बाजार कीमत पर निवल राष्ट्रीय उत्पाद + विदेशों से निवल चालू हस्तांतरण

निजी क्षेत्र की प्रयोज्य आय संबंधी समुच्चय

राष्ट्रीय आय सम्बन्धी समुच्चयों से वैयक्तिक प्रयोज्य आय निकालने के लिए निम्नलिखित समायोजन करने होते हैं:

सबसे पहले हम निजी क्षेत्र को देशीय उत्पाद से अर्जित आय का आंकलन करते हैं :

निजी क्षेत्र को देशीय उत्पाद से अर्जित आय = साधन लागत पर निवल देशीय उत्पाद
− सरकार को सम्पत्ति व उद्यमवृति से प्राप्त आय
− गैर-विभागीय उद्यमों की बचत

निजी क्षेत्र को देशीय उत्पाद से अर्जित आय से निजी आय का आंकलन किया जाता है।

निजी आय = निजी क्षेत्र को देशीय उत्पाद से अर्जित आय
+ राष्ट्रीय ऋण पर ब्याज
+ विदेशों से निवल कारक आय
+ सरकार से चालू हस्तांतरण
+ शेष विश्व से निवल चालू हस्तांतरण

निजी आय से वैयक्तिक आय निकाली जाती है :

वैयक्तिक आय = निजी आय
− निजी उद्यमों की बचतें (विदेशी कम्पनियों की निवल प्रतिधारित आय को निकालकर)
− निगम कर

वैयक्तिक आय से वैयक्तिक प्रयोज्य आय निकाली जाती है :

वैयक्तिक प्रयोज्य आय = वैयक्तिक आय
− परिवारों द्वारा दिये गए प्रत्यक्ष कर
− सरकारी प्रशासनिक विभागों को विविध प्राप्तियाँ

ऊपर दिखाए गए समायोजनों में कुछ मदों के बारे में अधिक जानकारी आवश्यक है। **'राष्ट्रीय ऋण पर ब्याज'** उस ऋण पर दिया गया ब्याज है जो सरकार ने अपने प्रशासनिक व्यय को पूरा करने के लिए लिया था। यह प्राप्तकर्त्ताओं की कारक आय नहीं है इसलिए इसे देशीय उत्पाद में शामिल नहीं किया गया था लेकिन यह प्रयोज्य आय का एक भाग तो है इसलिए इसे जोड़ा गया।

सरकारी प्रशासनिक विभागों को विविध प्राप्तियों में व्यक्तियों द्वारा दी गई फीस, जुर्माना, सफाई कर आदि शामिल किए जाते हैं।

इकाई 6

मुद्रा और बैंकिग

मुद्रा के चार कार्य हैं: विनिमय का माध्यम, लेखा की इकाई, मूल्य संचय का साधन, आस्थगित भुगतान का मानक। इनमें से प्रथम तीन पहले ही समझाए जा चुके हैं (NCERT की पुस्तक में)

आस्थगित भुगतान से अभिप्राय ऐसे भुगतानों से है जिनको भविष्य में करने के बारे में समझौता किया जाता है। मुद्रा ऐसे भुगतानों का मानक माना जाता है। मुद्रा के इस कार्य ने उधार लेना देना सुविधाजनक कर दिया है। इसके कारण ही वित्तीय सँस्थाओं का जन्म हुआ है।

वाणिज्य बैंको द्वारा मुद्रा का निर्माण

अर्थ : सौदों के लिए अर्थात् लेन देन में प्रयोग की जाने वाली वस्तु मुद्रा होती है। अर्थव्यवस्था में मुद्रा के स्टाक को मुद्रा पूर्ति कहते हैं। मुद्रा की पूर्ति के दो घटक हैं

(1) जनता के पास मुद्रा और वाणिज्य बैंकों की माँग जमाएँ। मुद्रा का निर्गमन केन्द्रीय बैंक (भारत में रिजर्व बैंक) करता है।

(2) माँग जमाओं का निर्माण वाणिज्य बैंक करते हैं और इसे बैंक मुद्रा कहते हैं।

बैंकों को जनता से जमाएँ प्राप्त होती हैं। जमाकर्ता जब चाहें अपनी जमाओं का एक भाग या सारी जमाएँ जब चाहें चैक द्वारा बैंक से निकाल सकते हैं। बैंक इन जमाओं का उपयोग ऋण देकर करते हैं। यही बैंकों द्वारा जमा निर्माण करने का आधार है। कितनी जमाओं का निर्माण किया जा सकता है यह दो बातों पर निर्भर करता है: (1) जनता द्वारा की गई प्रारम्भिक जमाएँ और विधिक आरक्षित निधि (Legal Reserve Ratio) जमाओं के निर्माण को ही मुद्रा का निर्माण या साख का निर्माण कहते हैं।

मुद्रा निर्माण की प्रक्रिया

अर्थ : मान लीजिए, पूरी वाणिज्य बैंकिग व्यवस्था एक ही इकाई है। यह भी मान लीजिए कि अर्थव्यवस्था में सारे लेन-देन बैंक के जरिए होते हैं। भुगतान चैक द्वारा किए जाते हैं और प्राप्तियाँ बैंक में जमा कर दी जाती हैं।

मान लीजिए शुरू में बैंक में 100 रू. जमा किए गए। बैंक इसका उपयोग उधार देकर करता है। लेकिन बैंक इस पूरी राशि का उधार नही दे सकता। बैंक के लिए अपनी जमाओं का एक निश्चित भाग नकद रूप में रखना कानूनी रूप से अनिवार्य है। यह भाग **विधिक आरक्षित निधि** (Legal Reserve Ratio (LRR)) कहलाता है। यह अनुपात केन्द्रीय बैंक निश्चित करता है। इसका एक भाग केन्द्रीय बैंक के पास रखना पड़ता है जिसे **आरक्षित नकदी निधि अनुपात** (Cash Reserve Ratio)कहते हैं और दूसरा भाग जिसे **सांविधिक चलनिधि अनुपात** (Statutary Liquidity Ratio) कहते हैं, बैंक स्वयं रखता है।

बैंक जमाओं का एक अनुपात आरक्षित नकदी निधि के रूप में क्यों रखता है? समय समय पर जमाकर्ता अपनी जमाएँ निकालते रहते हैं। जमाओं का केवल एक अनुपात ही नकद रूप में रखने के दो कारण हैं:

(1) अनुभव के आधार पर बैंकों को ये पता है कि सभी जमाकर्ता एक ही समय में अपनी सारी जमाएँ नही निकालते और वे अपनी जमाओं का केवल एक भाग ही निकालते हैं।

(2) बैंको के पास निरन्तर नई जमाएँ आती रहती हैं। अत: लोगों द्वारा प्रतिदिन जमाएँ निकालने के लिए कुल जमाओं का एक भाग ही नकद कोष के रूप में रखना पर्याप्त है।

बैंक जमाओं का निर्माण कैसे करता है? अब इस प्रक्रिया को समझते हैं। मान लीजिए बैंक के पास शुरू में 100 रु० जमा किए जाते हैं। बैंक 100 रु० की जमाओं में से 80 रु० का उधार दे सकता है। बैंक उधार कैसे देता है? ऋण लेने वालों के जमा खाते खोल दिए जाते हैं जिनमें से वे 80 रु० तक निकाल सकते हैं। मान लीजिए वे 80 रु० का भुगतान किसी को कर देते हैं।

हमने यह मान्यता की है कि सभी लेन देन बैंको के माध्यम से होते हैं। ऋण लेने वाले ने 80 रु० जिसे दिये वह यह राशि बैंक में अपने खाते में जमा कर देता है। इस प्रकार बैंक की माँग जमाएं 80 रु० बढ़ गई। अब कुल जमाएँ (100+80) 180 हो गई। 80 रु० की नई जमाओं में से बैंक 20 प्रतिशत नकद रखकर बाकी राशि (64 रु०) उधार दे देता है। ऊपर बताई गई प्रक्रिया फिर दोहराई जाती है। ऋण लेने वाला जिसे 64 रु० देता है वह इसे बैंक में जमा कर देता है। अत: बैंक जमाएं 64 रु० बढ़ गई। अब कुल जमाएं (100+80+64) 244 रु० हो गई।

जमा निर्माण की यह प्रक्रिया चलती रहती है। हर दौर के बाद कुल जमाएं बढ़ जाती है। इसके साथ साथ नकद कोष भी बढ़ता जाता है। जमा निर्माण की यह प्रक्रिया तब समाप्त होती है जब कुल नकद कोष शुरू के जमा (100 रु०) के बराबर हो जाता है। इस स्थिति में कुल जमाएं 500 रु० होगी जो शुरू की 100 रु० की जमाओं का 5 गुणा है। नीचे दी गई तालिका से यह और अधिक स्पष्ट हो जाता है।

वाणिज्य बैंक द्वारा जमा निर्माण

	जमाएं रु०	ऋण रु०	नकद कोष रु०
प्रारंभिक	100	80	20
पहला दौर	80	64	16
दूसरा दौर	64	51.20	12.80
.	.	.	.
.	.	.	.
.	.	.	.
.	.	.	.
कुल	**500**	**400**	**100**

मुद्रा गुणक

कुल जमाएँ शुरू की जमाओं का कितने गुणा होंगी, यह विधिक आरक्षित निधि अनुपात (LRR)से निर्धारित होता है।

$$\text{मुद्रा गुणक} = \frac{1}{\text{विधिक आरक्षित निधि अनुपात (LRR)}}$$

ऊपर दिए उदाहरण में LRR 0.2 है इसलिये

$$\text{मुद्रा गुणक} = \frac{1}{0.2} = 5$$

कुल मुद्रा या जमा निर्माण = शुरू की जमा $\times \frac{1}{LRR}$

$$= 100 \times \frac{1}{LRR} = 500$$

जितना कम विधिक आरक्षित निधि अनुपात होगा इतना ही अधिक गुणक का मूल्य होगा। यदि विधिक आरक्षित निधि अनुपात 0.1 है तो मुद्रा गुणक 10 $\left(=\frac{1}{0.1}\right)$ होगा और यदि विधिक आरक्षित निधि अनुपात 0.4 है तो मुद्रा गुणक 2.5 $\left(=\frac{1}{0.4}\right)$ होगा।

केंद्रीय बैंक

केंद्रीय बैंक देश की मौद्रिक व्यवस्था का सिरमौर होता है। देश की मौद्रिक नीतियों की रचना और नियंत्रण ही उनका प्रमुख दायित्व होता है। भारत का केन्द्रीय बैंक भारतीय रिज़र्व बैंक है।

केन्द्रीय बैंक के कार्य इस प्रकार हैं:

1. जारीकर्ता बैंक

केन्द्रीय बैंक देश में मुद्रा जारी करने का एकाधिकारी होता है। इससे वित्तीय प्रणाली में कार्य कुशलता आती है। प्रथम, क्योंकि करंसी जारी करने में एकरूपता आती है। दूसरे, इससे मुद्रा आपूर्ति पर केन्द्रीय बैंक का सीधा नियंत्रण रहता है क्योंकि 'जनता के पास मुद्रा' मुद्रा आपूर्ति का एक भाग है।

2. सरकार का बैंकर

केंद्रीय बैंक संघ एवं राज्य सरकारों का बैंकर होता है। यह उनके सारे बैंक संबंधी कार्य निपटाता है तथा सरकार भी अपने सारे चालू खाते के नकद कोष केंद्रीय बैंक के पास जमा रखती है।

सरकार के बैंकर के रूप में केंद्रीय बैंक उसकी ओर से भुगतान स्वीकार करना, भुगतान करना, और विनिमय लेन-देन आदि के बैंकिय कार्यो का संपादन करता है। कई बार सरकार की प्राप्तियां उसकी तात्कालिक देनदारियों से कम रह जाती हैं। इस दशा में केंद्रीय बैंक ही उसे अल्पावधि ऋण प्रदान करता है। यह ऋण भी राजकोषीय हुंडियों की बिक्री के माध्यम से ही दिए जाते हैं। अस्थायी या तदर्थ राजकोषीय हुंडियों के माध्यम से अल्पावधि ऋण प्राप्त करने का कार्य तो सरकारें सामान्य रूप से करती रहती हैं (यह कोई विशेष घटना नहीं होती)।

सरकार के बैंकर के रूप में केंद्रीय बैंक ही सार्वजनिक ऋण के प्रबंधन का दायित्व निभाता है। इसका अर्थ है कि केंद्रीय सरकार द्वारा जारी किए जाने वाले सभी ऋण पत्रों का प्रबंधकीय कार्य यही बैंक करता है। यह सरकार को ऋण के आकार, समय और अन्य शर्तो के विषय में उचित परामर्श देता है

केंद्रीय बैंक सरकार को बैंकिंग और वित्तीय मामलों में परामर्श भी देता है।

3. बैंकों का बैंक

बैंकों के बैंक के रूप में रिज़र्व बैंक अन्य बैंकों के नकदकोषों के एक अंश को अपने पास सुरक्षित रखता है, उन्हें अल्पावधि के लिए नकदी देता है और उन्हें केन्द्रीकृत समाशोधन और धनविप्रेषण सुविधाएँ प्रदान करता है। बैंको को अपनी निवल देयताओं के एक निश्चित अंश के समान राशि केंद्रीय बैंक के पास जमा रखनी पड़ती है (इसे नकद जमा अनुपात कहते हैं)। इस प्रावधान के पीछे इसे मौद्रिक और साख नियंत्रण के अस्त्र के रूप में प्रयोग करने का मन्तव्य ही प्रमुख रहा है। बैंक इसके अतिरिक्त भी कुछ न कुछ अधिक राशि केंद्रीय बैंक के पास जमा रखते हैं ताकि अप्रत्याशित समाशोधन तथा उनके अपने ग्राहकों द्वारा अतिशय आहरण से संभावित कठिनाइयों से निपटा जा सके। इस प्रकार जमा कोष का प्रयोग कर केंद्रीय बैंक अंतिम ऋणदाता के रूप में उन बैंकों को उध ार दे पाता है जिन्हें आवश्यकता हो।

केंद्रीय बैंक सभी वाणिज्य बैंकों के कार्यों का पर्यवेक्षण, नियमन और नियंत्रण भी करता है। इस नियमन में बैंकों को लायसेन्स जारी करने, शाखाओं के विस्तार, परिसंपत्तियों की तरलता, प्रबंधन, विलय और परिसमापन (बैंक को बंद करना) आदि कार्य सम्मिलित रहते हैं। नियंत्रण कार्य के लिए केंद्रीय बैंक समय-समय पर बैंको द्वारा जमा कराये गए परिपत्रों तथा अपने निरीक्षकों की रपटों का सहारा लेता है।

4. साख का नियंत्रक

केंद्रीय बैंक अर्थव्यवस्था के हित में मुद्रा और साख की आपूर्ति को नियंत्रित करता है। इस कार्य के लिए उसके पास कई उपकरण उपलब्ध रहते हैं। आइए इन उपकरणों पर विचार करें:

1. **बैंक-दर** : यह ब्याज की वह दर है जिस पर केंद्रीय बैंक अन्य बैंकों को उधार देता है। इस दर में परिवर्तन का अर्थ है केंद्रीय बैंक से नकदी पाने की लागत में परिवर्तन। इस दर की वृद्धि का अर्थ है केंद्रीय बैंक से उधार की लागत में वृद्धि। इसके कारण बैंकों की साख निर्माण कर मुद्रा आपूर्ति बढ़ाने की क्षमता कम रह जाती है। इसकी व्याख्या इस प्रकार है: बैंक दर में वृद्धि होने पर वाणिज्य बैंक भी अधिक ऊँची ब्याज दर पर उधार देना चाहेंगे। इस कारण, व्यवसायी पहले की अपेक्षा कम उधार लेकर ही काम चलाने का प्रयास करने लगेंगे। परिणामत: बैंक साख की मांग में कमी आ जाएगी। इसके विपरीत बैंक दर में कटौती का प्रभाव एकदम उलटा होगा।

2. **खुले बाजार के कार्यकलाप** : यह केंद्रीय बैंक द्वारा अपने विवेक से खुले बाजार में आम जनता तथा बैंकों को सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री या उनसे इनकी खरीदारी होती है। विश्लेषण की दृष्टि से जनता या बैंकों को बिक्री में कई अंतर नहीं होता, क्योंकि अंतत: किसी बैंक के पास जमा धन राशि का एक अंश रिज़र्व बैंक के पास पहुँच जाता है। बैंकों को इन सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री से उनके सुरक्षित कोष कम हो जाते हैं। बैंकों द्वारा प्रतिभूतियों के निमित्त जारी चैकों की राशि उनके सुरक्षित कोष खाते से घटा दी जाती है। इससे बैंकों की साख प्रदान कर मुद्रा की आपूर्ति बढ़ा पाने की क्षमता कम हो जाती है। जब, इसके विपरीत, केंद्रीय बैंक व्यावसायिक बैंकों से प्रतिभूतियाँ खरीदता है तो उन्हें भुगतान स्वरूप अपने चैक प्रदान करता है, उससे बैंकों के सुरक्षित कोषों में वृद्धि होती है। यह वृद्धि प्रत्यक्षत: उनकी साख दे सकने की क्षमता को बढ़ाकर मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि करने में सहायक हो जाती है।

3. **<u>आरक्षित नकदी निधि अनुपात</u>:** बैंकों को रिज़र्व बैंक के पास **आरक्षित नकदी निधि** रखनी होती है इसका न्यूनतम प्रतिशत केन्द्रीय बैंक तय करता है और इसे आरक्षित नकदी निधि अनुपात (Cash Reserve Ratio) कहा जाता है। आरक्षित निधि अनुपात की राशि तो उन्हें केंद्रीय बैंक के पास नकद रूप में जमा करानी होती है। यह उनकी मांग एवं मियादी जमाओं का एक अनुपात होती है। इसमें परिवर्तन मौद्रिक और साख नियंत्रण का उपाय है। इस अनुपात की वृद्धि से बैंकों के पास उपलब्ध नकदी कम हो जाती है, वे अधिक उधार नहीं दे पाते। इस अनुपात में कटौती बैंकों के पास उपलब्ध नकदी को बढ़ाकर उन्हें अधिक साख का सृजन करने में समर्थ बना देती है।

4. **<u>साँविधि चलनिधि अनुपात</u>:** बैंक अपनी मांग और मीयादी जमाओं के एक अंश को मान्य परिसंपत्तियों में लगाने को बाध्य है। इसका न्यूनतम अनुपात केन्द्रीय बैंक तय करता है और इसे साँविधिक चलनिधि अनुपात (Statutory Liquidity Ratio) कहते हैं। इस अनुपात में परिवर्तन से बैंकों की उनकी साख सृजन क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। SLR की वृद्धि से साख सृजन क्षमता में कमी आती है।

5. **मार्जिन सम्बंधी अपेक्षाएँ:** यह मार्जिन ऋण की राशि और ऋणकर्ता द्वारा प्रस्तुत जमानत के बाजार मूल्य का अंतर होता है। यदि केंद्रीय बैंक 40% अंतर का आग्रह करता है तो व्यवसायी जमानत प्रतिभूतियों के मूल्य के 60% के बराबर ही उधार दे पाते हैं। इस प्रकार इस मार्जिन में परिवर्तनों के माध्यम से बैंकों द्वारा दिए जा रहे मार्जिन ऋणों की राशियां प्रभावित होती हैं।

6. **रेपो दर (पुनर्खरीद दर):** जब वाणिज्य बैंकों को थोड़ी अवधि के लिए पैसे की आवश्यक होती है, तो वे केन्द्रीय बैंक से उधार ले सकते हैं। केन्द्रीय बैंक इस ऋण पर जो ब्याज वसूल करता है उसे रेपो दर (Repo Rate) कहते हैं। रेपो दर में वृद्धि करने में वाणिज्य बैंकों द्वारा उधार लेना मँहगा हो जाता है। इस प्रकार जब भी रेपो दर में वृद्धि की जाती है वाणिज्य बैंक अपने द्वारा दिए उधार पर ब्याज दर बढ़ाने को मजबूर हो जाते हैं। इससे बैकों द्वारा दिए जाने ऋणों की माँग पर बुरा प्रभाव पड़ता है। रेपो दर कम करने के विपरीत प्रभाव होते हैं।

7. **रिवर्स रेपो दर (प्रति पुनर्खरीद दर):** जब वाणिज्य बैंकों के पास अनावश्यक राशि पड़ी होती है तो वे केन्द्रीय बैंक में जमा करवाकर ब्याज कमा सकते हैं। ऐसी जमाओं पर केन्द्रीय बैंक द्वारा दी गयी ब्याज दर को "रिवर्स रेपो" दर (Reverse Repo Rate) कहते हैं। जब इस दर में वृद्धि होती है, तो इससे वाणिज्य बैंक अपना पैसा केन्द्रीय बैंक के पास जमा करवाने को उत्साहित होते हैं। इससे वाणिज्य बैंको को उधार देने की क्षमता में कमी आती है। रिवर्स रेपो दर कम करने के विपरीत प्रभाव होते हैं।

इकाई–7

आय का निर्धारण

अनैच्छिक बेरोजगारी : जन प्रचलित मजदूरी दर पर कार्य करने योग्य और इच्छुक सभी व्यक्तियों को काम नहीं मिलता तो यह अनैच्छिक बेरोजगारी की स्थिति है। इसका भेद "ऐच्छिक बेरोज़गारी" से किया जाता है जिसमें अभिप्राय उन लोगों से है जो काम करने में सक्षम तो हैं लेकिन स्वेच्छा से काम करना पंसद नहीं करते।

पूर्ण रोजगार: जब देश की समस्त श्रम शक्ति को रोजगार मिल जाता है, तो इसे पूर्ण रोजगार कहते हैं। श्रम शक्ति में वे लोग शामिल होते हैं, जो रोज़गार करने में सक्षम हैं और इच्छुक भी।

समग्र माँग : अर्थव्यवस्था में अन्तिम वस्तुओं की कुल माँग को समग्र माँग कहते हैं। यही अर्थव्यवस्था में अन्तिम वस्तुओं पर समग्र व्यय भी है।

समग्र माँग के घटक

1. निजी उपभोग के लिए वस्तुओं और सेवाओं की माँग। इसे निजी अन्तिम उपभोग व्यय भी कहते हैं।
2. निजी निवेश के लिए माँग।
3. सरकार द्वारा वस्तुओं व सेवाओं की माँग।
4. निवल निर्यात।

हमें आय के निर्धारण का अध्ययन केवल सरकार रहित बंद अर्थव्यवस्था के संदर्भ में करना है। अत: समग्र माँग के तीसरे व चौथे घटक पर विचार नहीं करेंगे। हमने दो क्षेत्रक, परिवार व फर्म लिए हैं।

1. उपभोग व्यय : निजी उपभोग के लिए वस्तुओं और सेवाओं की माँग परिवारों द्वारा की जाती है। इसे निजी अन्तिम **उपभोग व्यय** भी कहते हैं, इसे हम उपभोग व्यय कहेंगे। यहाँ उपभोग व्यय से तात्पर्य प्रत्याशित उपभोग व्यय है।

उपभोग व आय के सम्बन्ध को **उपभोग फलन** कहते हैं। उपभोग फलन को हम निम्नलिखित समीकरण के रूप में व्यक्त कर सकते हैं :

$$c = \overline{C} + bY ; \ \overline{C} > o, o < b < 1$$

c = उपभोग

$\overline{C}$ = स्वायत उपभोग (शून्य आय पर उपभोग व्यय)

b = सीमान्त उपभोग प्रवृति

Y = आय

$\overline{C}$ को धनात्मक माना गया है, यानि आय के शून्य स्तर पर भी उपभोग व्यय है। अत: किसी भी स्थिति में उपभोग व्यय शून्य नहीं हो सकता। 'b' उपभोग व्यय में परिवर्तन और आय में परिवर्तन का अनुपात है, अर्थात् आय में प्रति इकाई परिवर्तन से उपभोग व्यय में परिवर्तन की दर। इसे **सीमान्त उपभोग प्रवृति** (सी.उ.प्र.) कहते हैं। उदाहरण के लिये यदि $b = 0.6$ तो आय में 1 रु. वृद्धि होने पर उपभोग व्यय में 60 पैसे वृद्धि होगी। यदि $b = 0.45$ तो आय में 1 रु. वृद्धि होने से उपभोग व्यय में 45 पैसे की वृद्धि होगी।

b यानि सीमान्त उपभोग प्रवृति को घनात्मक माना गया है और इसका मूल्य 0 से लेकर 1 तक कुछ भी हो सकता है। इसका अर्थ है कि आय में 1 रु. की वृद्धि से उपभोग व्यय में वृद्धि 1 रु. से कम होगी। यदि b = 0.9 तो आय में 1 रु. वृद्धि से उपभोग व्यय में 90 पैसे की वृद्धि होगी। सीमान्त उपभोग प्रवृति को स्थिर माना गया है। अब हम एक संख्यात्मक उदाहरण लेते हैं।

मान लीजिए उपभोग फलन C = 100 + 0.8Y है।

आय के अलग-अलग स्तर पर सीमान्त उपभोग प्रवृति कितनी होगी और कुल उपभोग व्यय कितना होगा यह तालिका 1 में दर्शाया गया है।

तालिका-1 उपभोग, आय व सीमान्त उपभोग प्रवृति

आय (Y) (1)	उपभोग (C) (2)	आय में परिवर्तन (ΔY) (3)	उपभोग में परिवर्तन (ΔC) (4)	सीमांत उपभोग प्रवृति (MPC) = (4)/(3) = ΔC/ΔY (5)
0	100	-	-	-
100	180	100	80	(80/100) = 0.8
200	260	100	80	(80/100) = 0.8
300	340	100	80	(80/100) = 0.8
400	420	100	80	(80/100) = 0.8
500	500	100	80	(80/100) = 0.8
600	580	100	80	(80/100) = 0.8
700	660	100	80	(80/100) = 0.8
800	740	100	80	(80/100) = 0.8
900	820	100	80	(80/100) = 0.8
1000	900	100	80	(80/100) = 0.8

इस तालिका में आय के अलग-अलग स्तर पर उपभोग व्यय दर्शाया गया है और उपभोग व्यय ऊपर दिए गए उपभोग फलन के आधार पर निकाला गया है। जैसे कि जब आय शून्य है तो C = 100 + 0.8 x 0 = 100 जब आय 500 है तो C = 100 + 0.8 x 500 = 100 + 400 = 500 ।

कालम (1) आय के विभिन्न स्तर पर उपभोग व्यय दर्शाता है। कालम (2) उपभोग के विभिन्न स्तर दर्शाता है। कालम (3) आय में परिवर्तन दर्शाता है। कालम (4) उपभोग में परिवर्तन दर्शाता है। कालम (5) सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति का मूल्य दर्शाता है। दिए गए उपभोग फलन में सीमान्त उपभोग प्रवृति 0.8 है और यह स्थिर है। अत: कालम (5) में सीमान्त उपभोग प्रवृति आय के प्रत्येक स्तर पर 0.8 है।

इस उपभोग फलन को रेखाचित्र पर भी दिखा सकते हैं। रेखाचित्र 1 में इसे दर्शाया गया है।

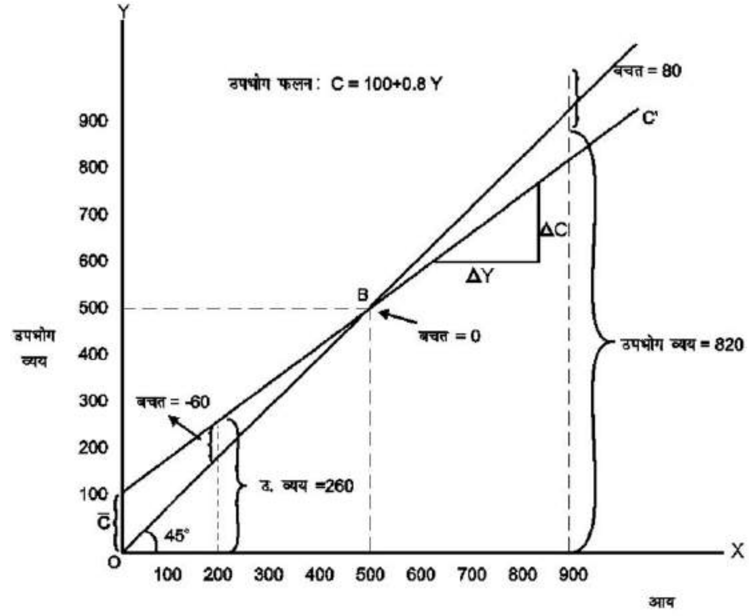

रेखाचित्र 1 - उपभोग वक्र

इस रेखाचित्र को समझने के लिये पहले हम इसमें उदगम बिन्दु से खींची गई 45^0 की रेखा पर विचार करेंगे। OX और OY अक्ष पर माप का पैमाना समान है। 45^0 रेखा की यह विशेषता है कि इस पर कोई भी बिन्दु OX अक्ष व OY अक्ष से समान दूरी पर है। OX अक्ष से दूरी उपभोग व्यय मापती है और OY अक्ष से दूरी आय मापती है।

इस प्रकार 45^0 रेखा के किसी भी बिन्दु पर आय व उपभोग व्यय बराबर हैं। हमारे उदाहरण में लिए गए उपभोग फलन के आधार पर खींची गई उपभोग वक्र एक सीधी रेखा CC' है जिसका ढलान(Slope) 0.8 है। यह उपभोग वक्र 45^0 रेखा को B बिन्दु पर काटती है। यह बिन्दु दर्शाता है कि आय के स्तर 500 पर उपभोग व्यय 500 है। 45^0 रेखा से ऊपर कोई भी बिन्दु दर्शाएगा कि उपभोग व्यय आय से अधिक है और इसके नीचे कोई भी बिन्दु दर्शाएगा कि उपभोग व्यय आय से कम है। OY अक्ष पर C बिन्दु दर्शाता है कि आय शून्य होने पर उपभोग व्यय 100 है।

उपभोग वक्र के B बिन्दु से बाँई ओर के भाग पर कोई भी बिन्दु यह दर्शाता है कि उपभोग व्यय आय से अधिक है और इसके B बिन्दु से दाँयी ओर के हिस्से पर कोई बिन्दु दर्शाता है कि उपभोग व्यय आय से कम है। उदाहरण के लिये जब आय 200 है तो उपभोग व्यय 260 है और जब आय 900 है तो उपभोग व्यय 820 है।

अतः जब उपभोग वक्र 45^0 रेखा से ऊपर होती है तो यह दर्शाती है कि उपभोग व्यय आय से अधिक है यानि अर्थव्यवस्था में बचत ऋणात्मक हैं। जहाँ उपभोग वक्र 45^0 रेखा को काटती है वह बिन्दु दर्शाता

है कि आय और उपभोग व्यय बराबर हैं और बचत शून्य है। जब उपभोग वक्र 45^0 रेखा से नीचे होती है तो उपभोग व्यय आय से कम होता है और बचत घनात्मक होती है। उपभोग वक्र और 45^0 रेखा के ऊर्ध्व (vertical) अन्तर द्वारा बचत मापी जा सकती है।

उपभोग और बचत

अब हम उपभोग व बचत के सम्बन्ध पर विचार करेंगे। यह सम्बंध इस प्रकार है :

$$S = Y - C$$

यह समीकरण दर्शाता है कि आय का वह भाग जिसे उपभोग पर खर्च नहीं किया वह बचत है। इसी समीकरण व उपभोग फलन के आधार पर हम बचत फलन ज्ञात कर सकते हैं। बचत फलन यह दर्शाता है कि आय के विभिन्न स्तरों पर बचत के स्तर क्या हैं।

$$\begin{aligned} S &= Y - C \qquad \left[\begin{matrix} \therefore c = \bar{c} + bY \\ \text{जहाँ } \bar{C} = \text{शून्य आय पर उपभोग} \end{matrix}\right] \\ &= Y - (\bar{C} + bY) \\ &= Y - \bar{C} - bY \\ &= -\bar{C} + Y - bY \\ S &= -\bar{C} + (1 - b)\,Y \end{aligned}$$

यही बचत फलन है। यदि आय शून्य है तो बचत $\bar{C}$ होगी यानि ऋणात्मक होगी और $\bar{C}$ के बराबर होगी। यह ऋणात्मक बचत शून्य आय स्तर पर उपभोग व्यय ($\bar{C}$) के बराबर है।

(1-b) बचत वक्र का ढलान (Slope) है जो यह दर्शाता है कि आय के बढ़ने पर उसका कितना भाग बचाया जाता है। इसे **सीमांत बचत प्रवृति** (सी.ब.प्र.) कहते हैं। क्योंकि b का मूल्य एक से कम माना गया है इसलिये (1-b) का मूल्य घनात्मक है अर्थात् सीमान्त बचत प्रवृति घनात्मक है। यदि सीमान्त उपभोग प्रवृति 0.8 है तो सीमान्त बचत प्रवृति (1-0.8) = 0.2 होगी। यानि यदि आय 1 रु. बढ़े तो बचत 20 पैसे बढ़ेगी।

अत: हम कह सकते हैं कि सीमांत उपभोग प्रवृति + सीमांत उपभोग प्रवृति = 1

उपभोग फलन के संदर्भ में लिए गए सांख्यिक उदाहरण के आधार पर हम बचत फलन ज्ञात करते हैं –

$$\begin{aligned} S &= \bar{C} + (1 - b)\,Y \\ &= -100 + (1 - 0.8)\,Y \\ S &= -100 + 0.2\,Y \end{aligned}$$

तालिका 2 : उपभोग - बचत सम्बन्ध

आय (Y)	आय मे परिवर्तन (ΔY)	उपभोग (C)	उपभोग में परिवर्तन (ΔC)	(सी. उ. प्र.) ($\Delta C/\Delta Y$)	बचत (S)	बचत में परिवर्तन (ΔS)	(सी. ब. प्र) ($\Delta S/\Delta Y$)	C+S	MPC + MPS
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
0	-	100	-	-	-100	-	-	0	-
100	100	180	80	0.8	-80	20	0.2	100	1
200	100	260	80	0.8	-60	20	0.2	200	1
300	100	340	80	0.8	-40	20	0.2	300	1
400	100	420	80	0.8	-20	20	0.2	400	1
500	100	500	80	0.8	0	20	0.2	500	1
600	100	580	80	0.8	20	20	0.2	600	1
700	100	660	80	0.8	40	20	0.2	700	1
800	100	740	80	0.8	60	20	0.2	800	1
900	100	820	80	0.8	80	20	0.2	900	1
1000	100	900	80	0.8	100	20	0.2	1000	1

तालिका 2 में आय के विभिन्न स्तरों पर उपभोग व्यय और बचत दर्शायी गई है। ध्यान दें कि उपभोग व्यय और बचत का योग सदा आय के बराबर होता है जैसा कि तालिका के कालम (9) में दर्शाया गया है। और सी.उ.प्र. व सी.ब.प्र. का योग सदा 1 के बराबर होता है जैसा कि कालम 10 में दिखाया गया है।

कालम 1 से 5 वही हैं जो तालिका 1 में थे। कालम 6 में आय के विभिन्न स्तर पर होने वाली बचत दिखाई गई है जिसे बचत फलन से ज्ञात किया गया है। कालम 8 सी.ब.प्र. निकालने की विधि दर्शाता है। जब आय 600 से बढ़कर 700 होती है तो बचत 20 से बढ़कर 40 हो जाती है। अत: सी.ब.प्र. = 20/100 = 0.2

तालिका 2 में दी गई सूचना को रेखाचित्र-2 पर दिखाया जा सकता है।

रेखाचित्र 2 का भाग (क) उपभोग वक्र दर्शाता है जो उपभोग फलन के आधार पर खींची गई है। भाग (ख) बचत वक्र दर्शाता है। भाग (क) में 45^0 रेखा और उपभोग रेखा के बीच का ऊर्ध्व (vertical) अन्तर बचत है। इन्हीं अन्तरों को दर्शाते हुए भाग (ख) की बचत वक्र खींची गई है।

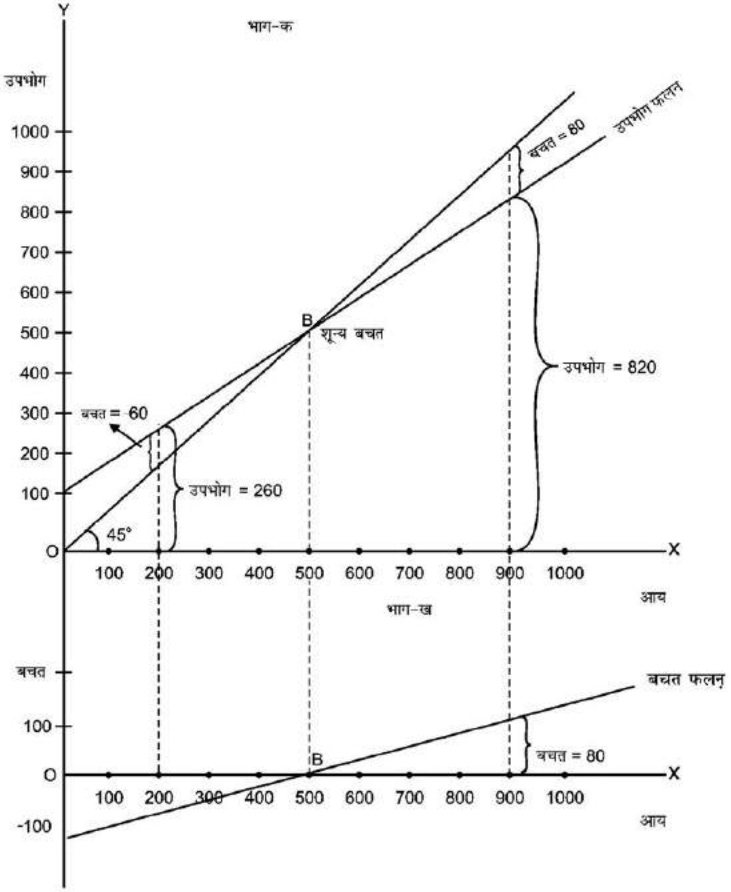

रेखाचित्र 2

जब आय 500 है तो भाग (क) में उपभोग वक्र दर्शाती है कि उपभोग व्यय भी 500 रुपये है। अत: बचत शून्य है। भाग (ख) में शून्य बचत B बिन्दु दर्शाता है जहाँ बचत वक्र क्षैतिज अक्ष को काटती है। आय 200 होने पर उपभोग व्यय 260 है और बचत -60 है। आय 900 होने पर उपभोग व्यय 820 है और बचत 80 है।

अत: रेखाचित्र के भाग क में B बिन्दु की बाँयी ओर उपभोग वक्र 45^0 रेखा के ऊपर है जो यह दर्शाता है कि यहाँ उपभोग व्यय आय से अधिक है और बचत ऋणात्मक है। भाग ख में बचत वक्र B बिन्दु से बाँयी ओर क्षैतिज अक्ष के नीचे है।

भाग क में B बिन्दु के दाँयी ओर उपभोग वक्र 45^0 रेखा के नीचे है जो दर्शाता है कि उपभोग व्यय आय से कम है। इसलिये भाग ख में B से दाहिनी ओर बचत वक्र क्षैतिज अक्ष से ऊपर है जो घनात्मक बचत दर्शाती है।

औसत उपभोग प्रवृति और औसत बचत प्रवृति

उपभोग फलन से हम आय के अलग-अलग स्तर पर उपभोग व्यय ज्ञात कर सकते हैं। उपभोग व्यय और आय का अनुपात (C/Y) औसत उपभोग प्रवृति कहलाता है।

इसी प्रकार बचत फलन से आय के अलग-अलग स्तर पर बचत ज्ञात की जा सकती है। बचत और आय के अनुपात (C/S) को औसत बचत प्रवृति कहते हैं औसत उपभोग प्रवृति (औ.उ.प्र.) और औसत बचत प्रवृति (औ.ब.प्र.) का योग सदा 1 के बराबर होता है। इसका प्रमाण नीचे दिया गया है।

$$Y = C + S$$

दोनों ओर को Y से भाग करते हैं

$$\frac{Y}{Y} = \frac{C}{Y} + \frac{S}{Y}$$

1 = औसत उपभोग प्रवृति + औसत बचत प्रवृति

पहले दिए गए उदाहरण के आधार पर नीचे दी गई तालिका 3 बनाई गई है जिसमें आय के विभिन्न स्तरों पर औसत उपभोग प्रवृति और औसत बचत प्रवृति के मूल्य दर्शाए गए हैं।

तालिका ३ : औसत उपभोग और बचत प्रवृतियाँ

आय Y	उपभोग व्यय C	औ.उ.प्र. (APC) (2)/(1)	बचत S	औ.ब.प्र. (APS) (4)/(1)	औ.उ.प्र.+औ.ब.प्र. (3) + (5)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
0	100	-	-100	-	-
100	180	1.8	-80	-0.8	1
200	260	1.3	-60	-0.3	1
300	340	1.13	-40	-0.13	1
400	420	1.05	-20	-0.05	1
500	500	1	0	0	1
600	580	0.97	20	0.03	1
700	660	0.94	40	0.06	1
800	740	0.92	60	0.08	1
900	820	0.91	80	0.09	1
1000	900	0.90	100	0.10	1

नोट : तालिका में सभी आंकड़ों को 2 दशमलव बिंदुओं तक ही आंकलित किया गया है।

कालम (3) औसत उपभोग प्रवृति निकालने की विधि दर्शाता है और कालम (5) औसत बचत प्रवृति निकालने की विधि दर्शाता है। कालम (6) दर्शाता है कि औ.उ.प्र. और औ.ब.प्र. का योग सदा 1 होता है।

इस तालिका का कालम (3) यह दर्शाता है कि जैसे-जैसे आय बढ़ती है औसत उपभोग प्रवृति घटती जाती है और कालम (5) दर्शाता है कि औसत बचत प्रवृति बढ़ती जाती है।

2. निजी निवेश

निजी निवेश की माँग का अर्थ है फर्मों के द्वारा प्रत्याशित निवेश व्यय। इसमें भौतिक पूंजी में वृद्धि और स्टॉक में वृद्धि शामिल होते हैं। इस अध्ययन में हम यह परिकल्पना करते हैं कि निवेश व्यय स्वायत्त है। इसका अर्थ है कि निवेश संबंधी निर्णय उत्पादन सहित इसके किसी भी निर्धारक तत्त्व से प्रभावित नहीं होते।

समग्र पूर्ति

एक देश के आर्थिक क्षेत्र में अंतिम वस्तुओं व सेवाओं का कुल उत्पादन का मूल्य समग्र पूर्ति कहलाता है। इसका तात्पर्य अर्थव्यवस्था में प्रत्याशित समग्र उत्पादन से है।

आय के संतुलन स्तर का निर्धारण

हम अपने अध्ययन में केवल दो क्षेत्रक, परिवार और फर्म ही शामिल करेंगे। अत: इस अध्ययन में समग्र माँग के केवल दो घटक हैं : उपभोग माँग और निवेश माँग। संतुलन स्तर के निर्धारण की दो विधियाँ हैं :

(1) उपभोग जमा निवेश विधि [(C+I) approach]

आय के स्तर के निर्धारण की एक विधि उपभोग जमा निवेश विधि है।

रेखाचित्र 3 में आय के विभिन्न स्तरों पर कुल व्यय अर्थात् समग्र माँग दर्शायी गई है।

CC वक्र उपभोग वक्र है जो आय के प्रत्येक स्तर पर प्रत्याशित उपभोग व्यय दर्शाती है। इसमें हम स्वायत्त निवेश जोड़ देते हैं। इससे हमें C+I वक्र प्राप्त हो जाती है। अब हम 45^0 रेखा की सहायता से आय का संतुलन स्तर निर्धारित कर सकते हैं। 45^0 रेखा पर प्रत्येक बिन्दु की OX अक्ष से दूरी OY अक्ष से दूरी के बराबर होती है जिसका अर्थ है कि इस वक्र पर प्रत्येक बिन्दु आय का वह स्तर दर्शाता है जो समग्र माँग के बराबर है। अर्थव्यवस्था संतुलन की स्थिति में तभी होती है जब समग्र माँग और समग्र पूर्ति बराबर हों।

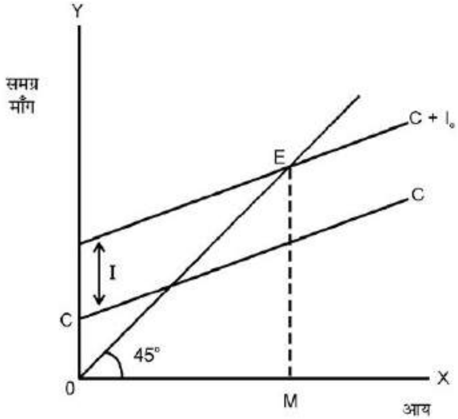

रेखाचित्र 3 उपभोग जमा निवेश विधि से आय का निर्धारण

($C + I_0$) वक्र विभिन्न आय स्तरों पर परिवारों और फर्मों के प्रत्याशित व्यय को दर्शाता है। अर्थव्यवस्था का संतुलन बिन्दु E होगा जहाँ ($C+I_0$) वक्र 45^0 रेखा को काटता है। E बिन्दु OM आय के स्तर को दर्शाता है और EM समग्र माँग को दर्शाता है। OM और EM बराबर हैं। अत: OM आय स्तर संतुलन स्तर है क्योंकि इस पर समग्र माँग ($C+I_0$) समग्र पूर्ति के बराबर है।

समायोजना की प्रक्रिया

संतुलन की स्थिति में प्रत्याशित व्यय और प्रत्याशित आय बराबर होते हैं। जब ये दोनों बराबर नहीं होते तो आय में परिवर्तन होता है और अन्त में ये दोनों बराबर हो जाते हैं।

इस प्रक्रिया को समझने के लिए हम एक ऐसी स्थिति लेते हैं जिसमें आय स्तर रेखाचित्र 3 के संतुलन आय स्तर OM से अधिक है। ये स्तर 45^0 रेखा पर E बिन्दु के दाँयी ओर होगा और इस स्तर पर ($C+I_0$) रेखा 45^0 रेखा के नीचे होगी। अत: प्रत्याशित व्यय प्रत्याशित आय से कम होगा। इसका अर्थ है कि फर्म जितना आय कर रही हैं, उपभोक्ता और फर्म दोनों मिलकर उससे कम माल खरीदेंगे। परिणामस्वरूप स्टॉक में अप्रत्याशित वृद्धि हो जाएगी। बिना बिके माल के स्टॉक में इस अप्रत्याशित वृद्धि के परिणामस्वरूप फर्में उत्पादन का स्तर कम कर देंगी। उत्पादन घटाने की यह प्रक्रिया तब तक चलेगी जब तक की आय घटकर OM स्तर तक नहीं आ जाता। OM स्तर पर समग्र माँग और समग्र पूर्ति बराबर हैं। अत: फिर से संतुलन की स्थिति पर पहुँच जाते हैं।

अब हम ऐसी स्थिति लेते हैं जिसमें आय का स्तर संतुलन स्तर OM से कम है। आय के ऐसे स्तर पर ($C+I_0$) वक्र 45^0 रेखा के ऊपर होगी। इसका अर्थ है कि प्रत्याशित व्यय प्रत्याशित आय से अधिक होगा। समग्र माँग कुल आय से अधिक है। इसके फलस्वरूप स्टॉक में अप्रायोजित कमी आने लगेगी। इसके परिणामस्वरूप फर्में उत्पादन के स्तर को बढ़ाऐंगी। उत्पादन बढ़ाने की यह प्रक्रिया तब तक चलेगी जब तक कि उत्पादन बढ़कर OM स्तर पर नहीं पहुँच जाता। OM स्तर पर समग्र माँग और समग्र पूर्ति बराबर हैं। अब कोई परिवर्तन नहीं होगा।

(2) बचत = निवेश विधि (S = I approach)

रेखाचित्र 4 में उपभोग फलन के आधार पर उपभोग वक्र और उसके अनुरूप बचत वक्र दिखाए गए हैं। उपभोग वक्र पर विभिन्न बिन्दु आय के विभिन्न स्तरों पर प्रत्याशित उपभोग व्यय दर्शाते हैं। इसी प्रकार बचत वक्र पर विभिन्न बिन्दु आय के विभिन्न स्तरों पर प्रत्याशित बचत दर्शाते हैं। ये दोनों वक्र एक दूसरे के पूरक हैं क्योंकि Y = C + S.

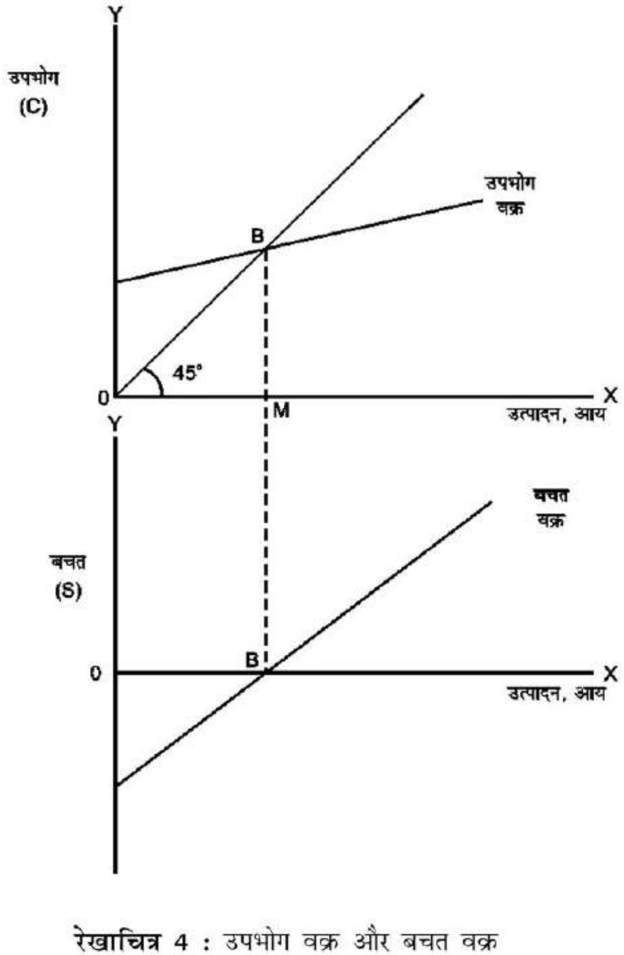

रेखाचित्र 4 : उपभोग वक्र और बचत वक्र

निवेश व्यय

हमने स्वायत्त निवेश की परिकल्पना की है जिसका अर्थ है कि आय के हर स्तर पर निवेश व्यय स्थिर रहता है। रेखाचित्र 5 में निवेश वक्र दर्शाया गया है।

रेखाचित्र 5 : निवेश वक्र

निवेश वक्र OX अक्षर के समानान्तर है क्योंकि निवेश व्यय स्थिर है।

उत्पादन का संतुलन स्तर

बचत वक्र और निवेश वक्र दोनों को एक साथ रेखाचित्र 6 में दिखाया गया है। ये दोनों वक्र एक दूसरे को E पर काटते हैं। यह बिन्दु आय के OM स्तर को दर्शाता है और यह आय का संतुलन स्तर है।

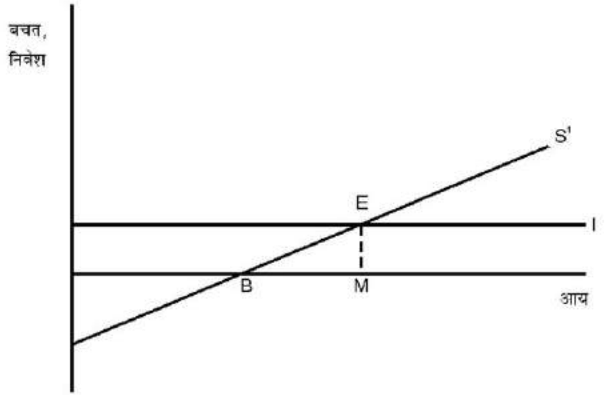

रेखाचित्र 6 : बचत चक्र और निवेश वक्र द्वारा निर्धारित संतुलन

संतुलन का अर्थ

रेखाचित्र 6 में E बिन्दु दर्शाता है कि OM आय पर परिवारों की आयोजित बचत फर्मों के आयोजित निवेश के बराबर हैं। जब आयोजित बचत व आयोजित निवेश बराबर नहीं होते तो उत्पादन में परिवर्तन होता है और इस परिवर्तन से ये दोनों बराबर हो जाते हैं। यदि आय का स्तर OM है तो आयोजित बचत EM है और आयोजित निवेश भी EM है। अत: यह आय का संतुलन स्तर है। इस स्तर में परिवर्तन की कोई प्रवृति नहीं है।

यदि अर्थव्यवस्था में आय का स्तर OM से अधिक है तो रेखाचित्र दर्शाता है कि बचत वक्र निवेश वक्र के ऊपर है। अत: आय के इस स्तर पर बचत निवेश से ज्यादा है। दूसरे शब्दों में कुल व्यय कुल आय से कम है। परिणामस्वरूप माल का स्टाक (अप्रत्याशित) बढ़ जाएगा। इस स्थिति को ठीक करने के लिए फर्म उत्पादन घटा देंगी। जब उत्पादन घट कर OM हो जाएगा तो संतुलन की स्थिति आ जाएगी। इस स्तर पर प्रत्याशित बचत और निवेश बराबर हैं और किसी प्रकार के परिवर्तन की प्रवृति नहीं होगी।

यदि अर्थव्यवस्था में आय का स्तर OM से कम हो तो इस स्तर पर बचत निवेश से कम होगी। इसका अर्थ है कि माल का स्टॉक घट जाएगा। इस स्थिति को ठीक करने के लिए फर्म उत्पादन बढ़ाएँगी। जब उत्पादन बढ़कर OM हो जाएगा तो प्रत्याशित बचत और निवेश बराबर होंगे और किसी भी प्रकार के परिवर्तन की प्रवृति नहीं होगी। अत: संतुलन की स्थिति स्थापित हो जाएगी।

इस प्रकार आय का केवल OM स्तर ही संतुलन स्तर है जिस पर प्रत्याशित बचत और प्रत्याशित निवेश बराबर हैं।

संतुलन की स्थिति में समग्र माँग और समग्र आपूर्ति एक समान होते हैं।

आइए एक संख्यात्मक उदाहरण की सहायता से इसे समझें। तालिका 4 पर ध्यान दीजिए जो स्वायत्त उपभोग $\overline{C}$ = 1000 और MPC = 0.8 पर आधारित हैं:

तालिका 4

राष्ट्रीय आय का निर्धारण (करोड़ रू०)

तालिका 4 उत्पादन के स्तर का निर्धारण (करोड़ रु. में)

आय	उपभोग व्यय	बचत	निवेश व्यय	समग्र आपूर्ति		समग्र मार्ग	आय प्रवृति
(Y)	(C)	(S)	(I)	(=Y)		(C+I)	
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)		(6)	(7)
0	100	-100	300	0	<	400	बढ़ने की ओर
1000	900	100	300	1000	<	1200	बढ़ने की ओर
2000	1700	300	300	2000	=	2000	संतुलन
3000	2500	500	300	3000	>	2800	घटने की ओर
4000	3300	700	300	4000	>	3600	घटने की ओर
5000	4100	900	300	5000	>	4400	घटने की ओर

कॉलम 5 और 6 की तुलना कीजिए। कॉलम 5 में समग्र आपूर्ति है जो परिभाषा के अनुसार आय के समान है। कॉलम 6 में समग्र माँग है जो कि उपभोग व्यय और निवेश व्यय का योग है। पहली पंक्ति में जहाँ आय = शून्य है समग्र माँग समग्र आपूर्ति से अधिक है। यही स्थिति दूसरी पंक्ति की है जिसमें आय = 1000 है। समग्र माँग समग्र आपूर्ति से अधिक होने के कारण स्टाक (inventory) वांछनीय स्तर से नीचे आने लगते है। इन्हें वाँछनीय स्तर पर वापिस लाने के लिए उत्पादक अधिक उत्पादन करने लगते है। इससे आय बढ़ने लगती है।

तीसरी पंक्ति में आय = 2000 जिस पर समग्र माँग = समग्र आपूर्ति है। इसके कारण स्टाक का वांछनीय स्तर बना रहता है। अर्थव्यवस्था संतुलन में रहती है।

चौथी, पाँचवी और छठी पंक्तियों में समग्र माँग समग्र आपूर्ति से कम है जिसके कारण स्टाक का स्तर वांछनीय स्तर से उपर चला जाता है। इस वांछनीय स्तर पर नीचे वापिस लाने के लिए उत्पादक उत्पादन घटाने लगाते हैं जब तक कि स्टाक वांछनीय स्तर पर वापिस न पहुँच जाए। इससे आय घटने लगती है।

गुणक

हमने इस अध्ययन में यह परिकल्पना भी की है कि सीमान्त उपभोग प्रवृति स्थिर रहती है। आय में परिवर्तन से इसमें परिवर्तन नहीं आता। अब तक के अध्ययन से हमें यह भी ज्ञात हुआ कि आय, उत्पादन व रोजगार का स्तर कितना होगा यह समग्र माँग पर निर्भर करता है क्योंकि पूर्ति तो पूर्णतया लोचदार है। दो क्षेत्रीय माडल में उपभोग व्यय और निवेश व्यय यही दो समग्र माँग के घटक हैं। उपभोग व्यय आय (उत्पादन) पर निर्भर करता है। यदि अर्थव्यवस्था में उत्पादन, आय व रोजगार का स्तर बढ़ाना हो तो निवेश को बढ़ाना होगा। जब निवेश व्यय बढ़ाया जाता है तो इससे आय में होने वाली वृद्धि निवेश में वृद्धि से कई गुना होती है। निवेश में वृद्धि का जितने गुना आय में वृद्धि होती है उसे गुणक कहते हैं।

गुणक की प्रक्रिया को एक संख्यात्मक उदाहरण द्वारा सरलता से समझा जा सकता है। यह ध्यान रखें कि अर्थव्यवस्था में जितना व्यय बढ़ता है उतनी ही आय बढ़ती है।

मान लीजिए अर्थव्यवस्था में सीमान्त उपभोग प्रवृति 0.8 है और निवेश 1000 रुपये बढ़ता है अर्थात् व्यय 1000 रु. बढ़ा जिससे आय भी 1000 रु. बढ़ेगी। बढ़ी हुई आय का 0.8 भाग उपभोग पर व्यय किया जाएगा क्योंकि सी.उ.प्र. 0.8 है। अत: अब उपभोग व्यय 800 रुपये बढ़ेगा जिससे आय 800 रुपये बढ़ेगी। आय में 800 रुपये की वृद्धि से उपभोग व्यय 800 x 0.8 = 640 रुपये बढ़ेगा। इससे आय 640 रुपये बढ़ेगी। फिर उपभोग व्यय 640 x 0.8 = 512 रु. बढ़ेगी। इससे आय 512 रु. बढ़ेगी। इस प्रकार आय में वृद्धि और उपभोग में वृद्धि की एक श्रृंखला शुरू हो गई। आय और व्यय में होने वाली हर अगली वृद्धि कम होती जा रही है क्योंकि बढ़ी हुई आय का एक भाग बचाया जा रहा है। (सी.ब.प्र. = 0.2) आय में वृद्धि की एक अनन्त श्रृंखला बन जाएगी जो शून्य की ओर अग्रसर है।

तालिका 5 में निवेश में परिवर्तन के कारण आय और उपभोग में परिवर्तनों की श्रृंखला दिखाई गई है।

तालिका 5 गुणक की प्रक्रिया

(आधार : Δ निवेश = 1000, सीमांत उपभोग प्रवृति = 0.8 = 4/5)

आय में वृद्धि	**उपभोग व्यय में वृद्धि**
(ΔY)	(ΔC)
1000	800 (=1000 x 0.8)
800	640 = 800 x 0.8)
640	512 (= 640 x 0.8)
512	409.6 (512 x 0.8
⋮	⋮
= 5000	4000 (= 500 x 0.8)

इस तालिका में पहले कॉलम में आय में विभिन्न चरणों में होने वाली वृद्धि दिखाई गई है। निवेश व्यय में 1000 रु. की वृद्धि से आय में 1000 रु. की वृद्धि होती है। दूसरे कॉलम में उपभोग व्यय में विभिन्न चरणों में होने वाली वृद्धि दिखाई गई है। आय में 1000 रु. की वृद्धि से उपभोग व्यय में 1000 x 0.8 वृद्धि होती है क्योंकि सी.उ.प्र. 0.8 है। उपभोग व्यय में जितनी वृद्धि हुई अगले चरण में आय में उतनी ही वृद्धि होती है। इस प्रकार यदि आय में विभिन्न चरणों में होने वाली वृद्धि को लिख लें तो यह एक श्रृंखला बन जाती है। इस श्रृंखला का योग गणित एक विधि द्वारा निकाला जा सकता है। इसका योग निकालने का सूत्र है : $1-\frac{1}{r}$ जिसमें r श्रृंखला का सार्व अनुपात (common ratio) है। इस श्रृंखला में सार्व अनुपात 0.8 है जो कि सी.उ.प्र. है। अत: निवेश में 1000 रु. के परिवर्तन से आय में कुल परिवर्तन = $1000 \times \frac{1}{1-0.8} = 1000 \times \frac{1}{0.2} = 5000$ रु.।

क्योंकि 1 - सी.उ.प्र. = सी.ब.प्र. जो इस उदाहरण में 0.2 है तो : $1000 \times \frac{1}{\text{सी.ब.प्र.}}$

$$\text{आय में कुल परिवर्तन} = 1000 \times \frac{1}{\text{सी.ब.प्र}}$$

$$= 1000 \times \frac{1}{0.2}$$

$$= 5000 \text{ रू.}$$

इस प्रकार निवेश में 1000 रु. की वृद्धि से आय में इसका 5 गुना वृद्धि हुई। 5 गुणक का मूल्य है।

$$\text{गुणक} = \frac{\Delta Y}{\Delta I} = \frac{5000}{1000} = 5$$

$$= \frac{1}{1 - \text{सी.उ.प्र.}}$$

गुणक का आकार सी.उ.प्र. के मूल्य पर निर्भर करता है क्योंकि जितनी अधिक सी.उ.प्र. होगी उतना ही अधिक गुणक का मूल्य होगा।

$$\text{एक अन्य रूप में गुणक} = 1000 \times \frac{1}{\text{सी.ब.प्र}}$$

जितनी अधिक सी.ब.प्र. होगी उतना ही कम गुणक का मूल्य होगा।

अति माँग और अभावी माँग

अब तक के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था में आय के स्तर का निर्धारण केवल समग्र माँग के स्तर द्वारा होता है। यदि समग्र माँग पूर्ण रोजगार के उत्पादन स्तर के बराबर है तो अर्थव्यवस्था में न केवल संतुलन की स्थिति होगी बल्कि पूर्ण रोजगार की स्थिति भी होगी। इसे पूर्ण रोजगार संतुलन की स्थिति कहते हैं। यदि समग्र माँग पूर्ण रोजगार के आय स्तर से कम है तो यह अभावी माँग की स्थिति होगी। इस अवस्था में अर्थव्यवस्था में ना तो पूर्ण रोजगार और ना ही संतुलन की स्थिति है। यदि समग्र माँग पूर्ण रोजगार के आय से अधिक है तो यह अति माँग की स्थिति होगी। इससे कीमतें बढ़ने लगेंगी।

अब हम विस्तार से एक-एक करके इन समस्याओं पर विचार करेंगे।

अभावी माँग की समस्या

यदि अर्थव्यवस्था में समग्र माँग पूर्ण रोजगार स्तर की समग्र पूर्ति से कम है तो अर्थव्यवस्था में अभावी माँग की स्थिति है। अभावी माँग के कारण अपस्फीतिकारी अंतर की स्थिति उत्पन्न होती है। इसके कारण अर्थव्यवस्था में आय, उत्पादन और रोजगार का स्तर घटने लगता है और अर्थव्यवस्था अल्प रोजगार संतुलन (under employment equilibrium)की स्थिति में पहुँच जाती है। रेखाचित्र 7 में अभावी माँग की स्थिति दर्शायी गयी है।

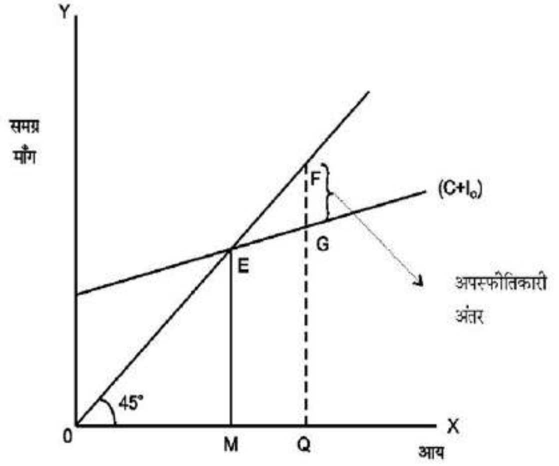

रेखाचित्र 7 – अभावी माँग, अपस्फीतिकारी अंतर

OY अक्ष पर समग्र माँग दर्शायी गई है। OX अक्ष पर आय व उत्पादन का स्तर दर्शाया गया है। पूर्ण रोजगार के स्तर पर आय व उत्पादन OQ है। अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार संतुलन के लिये समग्र माँग भी इतनी ही होनी चाहिये। रेखाचित्र में यह माँग FQ है क्योंकि FQ = OQ। यह तब संभव है जब अर्थव्यवस्था में समग्र माँग वक्र $(C+I_1)$ हो। यदि समग्र माँग वक्र $(C+I_0)$ है तो OQ उत्पादन स्तर पर समग्र माँग केवल GQ है। अत: समग्र माँग पूर्ण रोजगार स्तर पर समग्र पूर्ति से कम है क्योंकि समग्र माँग GQ है और समग्र पूर्ति FQ या OQ है। दोनों का अन्तर FG है। यह अन्तर (FG) अपस्फीतिकारी अंतर है। अर्थव्यवस्था असंतुलन की स्थिति में है। इस अपस्फीतिकारी अंतर के कारण अर्थव्यवस्था में परिवर्तन होने शुरु होंगे।

अपस्फीतिकारी अंतर को अपस्फीतिकारी इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसके कारण अर्थव्यवस्था में कीमत स्तर निरंतर गिरता है।

अति माँग की समस्या

यदि अर्थव्यवस्था में समग्र माँग पूर्ण रोजगार के स्तर पर समग्र पूर्ति से अधिक है तो यह अति माँग की स्थिति है। अति माँग से स्फीतिकारी अंतर उत्पन्न होता है जिससे मुद्रा स्फीति की स्थिति उत्पन्न होती है अर्थात् कीमतें बढ़ने लगती हैं। रेखाचित्र 8 में अति माँग की स्थिति दर्शायी गयी है।

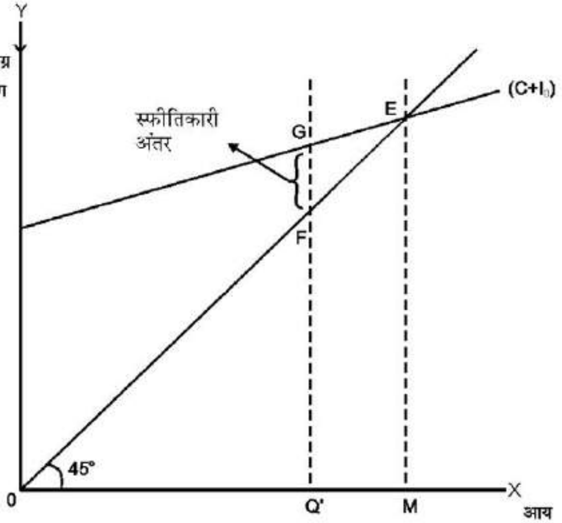

रेखाचित्र 8 – अति माँग, स्फीतिकारी अंतर

यदि अर्थव्यवस्था में समग्र माँग वक्र $(C+I_0)$ है तो पूर्ण रोजगार के उत्पादन स्तर (OQ) पर समग्र माँग GQ है क्योंकि G बिन्दु $(C+I_1)$ समग्र माँग वक्र पर है। और GQ', OQ' से अधिक है। दोनों का अन्तर GF है। अत: अर्थव्यवस्था में अति माँग की स्थिति है और GF **स्फीतिकारी अंतर है।** पूर्ण रोजगार पर समग्र पूर्ति पर समग्र माँग का आधिक्य स्फीतिकारी अंतर कहलाता है। इस अन्तराल के कारण कीमतें बढ़ती हैं।

अभावी माँग की समस्या को दूर करने के उपाय:

अभावी माँग की समस्या को हल करने के केवल दो उपायों पर विचार किया जाएगा।

(i) सरकारी व्यय में वृद्धि द्वारा

यदि सरकारी व्यय में अपस्फीतिकारी अंतर के बराबर वृद्धि की जाय, तो अर्थव्यवस्था को पूर्ण रोजगार स्तर पर वापिस लाया जा सकता है।

इस प्रकार सरकारी व्यय में वृद्धि करके अभावी माँग की समस्या को समाप्त किया जा सकता है।

(ii) ऋण उपलब्धता में वृद्धि करके

यदि फर्में बैंकों से निवेश के लिए अधिक ऋण लें तो निवेश व्यय बढ़ जाएगा जिससे समग्र माँग बढ़ जाएगी। इसके लिए साख (ऋण) की उपलब्धता को बढ़ाया जाता है। यह कार्य सुरक्षित निधि अनुपात को कम करके किया जाता है। सुरक्षित निधि अनुपात कम करने से बैंकों की ऋण देने की क्षमता बढ़ जाती है। बैंक दर को कम करके ब्याज दर को घटाया जा सकता है। ब्याज दर कम होने से फर्में अधिक ऋण लेने के लिए प्रोत्साहित होंगी। खुले बाजार के कार्यकलापों द्वारा मुद्रा की पूर्ति को बढ़ाया जा सकता है। इससे ऋण की उपलब्धता बढ़ती है। **(इन सभी उपकरणों की विस्तार से चर्चा पहले ही ''केन्द्रीय बैंक के कार्य'' के अधीन की जा चुकी है।)** जब फर्में निवेश के लिए ऋण लेती हैं तो समग्र माँग बढ़ जाती है और अभावी माँग की समस्या का समाधान हो जाता है।

अति माँग की समस्या को दूर करने के उपाय

जब समग्र माँग पूर्ण रोजगार के स्तर पर समग्र पूर्ति से अधिक होती है तो अति माँग की स्थिति होती है। अति माँग के माप को स्फीतिकारी अंतर कहते हैं। यदि समग्र माँग में स्फीतिकारी अंतर जितनी कमी कर दी जाए तो इस समस्या का समाधान हो जाएगा। समग्र माँग दो तरीकों से कम कर सकते हैं:

(i) सरकारी व्यय में कमी द्वारा

यदि सरकारी व्यय में कमी कर दी जाए तो समग्र माँग कम हो जाएगी। सरकारी व्यय में कमी स्फीति अन्तराल के बराबर होनी चाहिए ताकि पूर्ण रोजगार के स्तर पर समग्र पूर्ति और समग्र मांग बराबर हो जाए।

(ii) ऋण उपलब्धता में कमी करके

केन्द्रीय बैंक सुरक्षित निधि अनुपात को बढ़ाकर, बैंक दर को बढ़ाकर खुले बाजार के कार्यकलापों द्वारा अन्य विधियों फर्मों द्वारा व किए जाने वाले निवेश को प्रतिकूल रूप में प्रभावित कर सकता है। **(इन विधियों के बारे में विस्तार से चर्चा ''केन्द्रीय बैंक के कार्य'' के अधीन पहले ही की जा चुकी है।)** निवेश व्यय कम होने से समग्र मांग कम हो जाएगी और इससे अति मांग की समस्या का समाधान हो जाएगा।

इकाई 8

पूँजीगत प्राप्तियां और राजस्व प्राप्तियाँ

जिन प्राप्तियों से या तो कोई दायित्व उत्पन्न होता है (जैसे कि ऋण लेना) या परिसम्पत्ति कम होती है (जैसे कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों का विनिवेश) उन्हें **पूँजीगत प्राप्तियाँ** कहते हैं। जिन प्राप्तियों से ना तो कोई दायित्व उत्पन्न होता है और ना ही परिसम्पति कम होती है उन्हें **राजस्व प्राप्तियाँ** कहते हैं! करों से प्राप्तियाँ राजस्व प्राप्तियाँ है।

पूँजीगत व्यय और राजस्व व्यय

वे व्यय जिनसे या तो परिसम्पत्ति का निर्माण हो (जैसे विद्यालय के भवन का निर्माण) या दायित्व कम हो (जैसे ऋण की अदायगी), वे **पूँजीगत व्यय** कहलाते हैं।

ऐसे व्यय, जिनसे ना तो परिसम्पत्ति का निर्माण हो और ना ही दायित्व कम हो, वे **राजस्व व्यय** कहलाते हैं (जैसे कि ब्याज का भुगतान, आर्थिक सहायता, राज्यों को दिए गए अनुदान)।